प्रशिक्षण शृंखला प्रकाशन-1

उच्च हिमालय के औषधीय पौधों की कृषि तकनीकें

प्रशिक्षण मार्गदर्शिका

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें:

क्षेत्रीय एवं सुगमता केन्द्र, उत्तर भारत-1,
राष्ट्रीय औषध पादप बोर्ड, आयुष मंत्रालय
आयुर्वेद अनुसंधान संस्थान,
जोगिन्द्र नगर-175015, जिला मण्डी, हिमाचल प्रदेश
ई-मेल: rcfcnorth@gmail.com
वैब: rcfcnorth.in, jadibutibazar.in, echarak.in
सम्पर्क न॰ : 01908-222333

आर०सी०एफ०सी० के बारे में

भारत एक विशाल देश है जहां विभिन्न जलवायु खंडो से इसे जैविक विविधता का एक समृद्ध भूभागमाना जाता है। इस जैविक विविधता के चलते यहा पर औषधीय पौधों की असंख्य प्रजातिया पाई जाती है जिनका उपयोग वैदिक काल से विभिन्न रोगों एवं व्याधियों के उपचार में किया जाता रहा है। आयुर्वेद में ऐसे औषधीय पौधों का वर्णन विस्तार पूर्वक किया गया हैं। बढ़ती जनसंख्या व जागरूकता से औषधीय पौधों का देश विदेश में उपयोग बढ़ने से इन की दवाई निर्माण में मांग की बढ़ोतरी हो रही है। अधिकतर ऐसे पौधों का दोहन जंगलों से किया जा रहा है। मांग की आपूर्ति के लिए औषधीय पौधों का अधिक दोहन से इनकी उपलब्धि प्राकृतिक अवस्था में कम हो रही है तथा बहुत सी औषधीय पौधों की प्रजातियां दुर्लभ तथा विलुप्त होने की कगार पर आ गई हैं। ऐसी प्रजातियों को प्राकृतिक अवस्था में संरक्षण के लिए उचित पद उठाने की आवश्यकता है तथा साथ ही इनकी कृषि की भी आवश्यकता है ताकि ये औषध निर्माण में उपलब्ध की जा सके। इसको ध्यान में रखते हुए केन्द्र सरकार ने 2000 में एक नीतिगत फैसले के अंतर्गत देश में औषधीय पौधों के संवर्धन के लिए भारत सरकार ने आयुष मंत्रालय के अंतर्गत औषधीय पादप बोर्ड का गठन किया गया । बोर्ड द्वारा देश भर में जड़ी बूटियां की कृषि एवं संवर्धन के लिए विभिन्न योजनाएं चलाई जा रही है। इस क्षेत्र को बढ़ावा देने के लिए औषधीय पौधों की खेती, प्रसंस्करण, विनिर्माण और विपणन को विशेष रूप से बढ़ावा दिया जा रहा है। इस क्षेत्र के जुड़े हुए हितधारकों एवं किसानों को विभिन्न योजनाओं द्वारा प्रोत्साहित किया जा रहा है।

देश के विभिन्न जलवायु खंडों को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय स्तर पर यह अनुभव किया गया कि बोर्ड के क्षेत्रीय कार्यालय स्थापित किए जाएं तथा क्षेत्र विशेष के औषधीय पौधों का समग्र विकास किया जा सके। इसे ध्यान में रखते हुए बोर्ड द्वारा 2017 देश के विभिन्न भागों में क्षेत्रीय केन्द्रों की स्थापना की गई ।लगभग समान जलवायु वाले प्रदेशों को एक क्षेत्रीय केंद्र में रखवाया गया। बोर्ड द्वारा देशभर में ऐसे सात केन्द्रों की स्थापना की गई तथा इन क्षेत्रीय केंद्रों का नाम "क्षेत्रीय सुगमता केंद्र"(Regional Cum Facilitation Centre) रखा गया। इसके अंतर्गत उतरी भारत के सात राज्यो के लिए जोगिंदरनगर में एक क्षेत्रीय केंद्र का गठन किया गया जिनमे उत्तरप्रदेश, उत्तराखंड, पंजाब, हरयाणा, हिमाचल प्रदेश, चंडीगढ़ और दिल्ली प्रदेश रखे गए हैं। जोगिंदर नगर का क्षेत्रीय सुगमता केंद्र हि०प्र० सरकार के आयुष विभाग के अंतर्गत आर आई एस एम जोगिंदर नगर में 2017 से काम कर रहा है। केंद्र क्षेत्र के किसानों एवं अन्य हितधारकों की आय बढ़ाने के लिए प्रयासरत है तथा इसके के लिए औषधीय पौधों की खेती, संग्रह, मूल्य, संवर्धन, उत्पाद विकास से लेकर विपण तक एक संपूर्ण मूल्य श्रृंखला विकसित करने के लिए भी कार्यरत है।

चोरा, चोरक

वानस्पतिक नाम: एंजेलिका ग्लौका
व्यापारिक नाम: गंद्रायान
कुल: एपिएसी
प्रयोज्य अंग: जड़ें और बीज

रोचक तथ्य: उत्तराखंड के स्थानीय लोग इस पौधे की जड़ों को बुरी आत्माओं और भूतों से बचाव के लिए उपयोग करते हैं। इसका उपयोग सांप/कीड़े भगाने के लिए और स्थानीय धूप (इंसेन्स) के रूप में भी किया जाता है। हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड के लोगों द्वारा यह पौधा औषधीय पौधों के व्यापार में बेचा जाता है।

चिकित्सीय उपयोग: चोरा का उपयोग गैस्ट्रिक के दर्द, पाचन में कठिनाई, कब्ज, घाव और अन्य स्वास्थ्य समस्याओं के समाधान लिए किया जाता है। इसकी जड़ें औषधीय गुणों के लिए जानी जाती हैं और इसे विभिन्न प्रकार के कुकिंग में सुगंधित करने के लिए भी इस्तेमाल किया जाता है।

स्वभाव और आवास: चोरा के पौधों की रोपाई के लिए ठंडी और समशीतोष्ण जलवायु की आवश्यकता होती है। इसे 2000-3000 मीटर की ऊँचाई पर उगाया जा सकता है। यह गहरी, समृद्ध, छिद्रयुक्त, नम मिट्टी में और छायादार स्थान में अच्छी पैदावार करता है। इसकी सफल खेती के लिए काफी मात्रा में जैविक खाद की आवश्यकता होती है।

वानस्पतिक विवरण: इस पौधे की जड़ें कंद के आकार की होती हैं। यह 20-50 मिलीमीटर मोटी, फूली हुई, भूरे रंग की होती है और इसकी सतह गहरी सिकुड़ी और खुरदरी होती है। जबकि इसका तना खोखला होता है। इस पौधें की पत्तियाँ अंडाकार या लंबी-लांस जैसी आकार में होते हैं। इसके फूल सफेद, पीले या हल्के बैंगनी रंग के होते हैं।

कृषि तकनीक:
नर्सरी तकनीक: बीजों को नवंबर और दिसंबर में तुरंत कटाई के बाद पॉली हाउस के अंदर बोया जाता है। नम बीज सूखे बीजों की तुलना में बेहतर अंकुरण क्षमता रखते हैं। बीजों के अंकुरण में 25-40 दिन लगते हैं।
भूमि की तैयारी और खाद: खेत की अच्छी तरह से जुताई करनी चाहिए और खरपतवार मुक्त करना चाहिए। भेड़ और बकरी की खाद इसकी खेती के लिए अच्छी मानी जाती है। एक हेक्टेयर भूमि के लिए लगभग 15-20 टन खाद की आवश्यकता होती है।
रोपाई और इष्टतम अंतराल: पौधों को अप्रैल और मई में 45×45 सेंटीमीटर के अंतराल पर रोपित किया जाता है। पौधों के चार से छह महीने की वृद्धि के बाद, बारिश के मौसम की शुरुआत में रोपण किया जाता है। एक हेक्टेयर भूमि के लिए लगभग 50,000 पौधों या 6.2 किलोग्राम बीज की आवश्यकता होती है ।
सिंचाई और निराई: सूखे मौसम में सप्ताह में दो बार सिंचाई की आवश्यकता होती है। बारिश के मौसम में हर महीने और सूखे मौसम में हर दो-तीन महीने में खरपतवार निकालना आवश्यक है।
रोग एवं कीट नियंत्रण: इस प्रजाति में किसी भी रोग या कीटों की समस्या की सूचना नहीं मिली है।

कटाई और फसल प्रबंधन: इसकी खेती में, दो से तीन वर्षों के भीतर कटाई की जा सकती है। जड़ों की कटाई सितंबर और अक्टूबर में की जाती हैं, जब बीज आंशिक रूप से परिपक्व होते हैं। कटाई के बाद, जड़ों के शीर्ष भाग को भविष्य के फसलों के लिए खेत में फिर से रोपित किया जाता है। शेष भाग को धोकर सुखाने के लिए छाया में रखा जाता है।

उपज: हिमालय के ऊँचाई वाले क्षेत्रों में इसकी खेती में लगभग 593-600 किलोग्राम/हेक्टेयर उपज का अनुमान है।

रासायनिक घटक: इस प्रजाति की जड़ों में वैलेरिक एसिड, एंजेलिक एसिड, लेक्टोंस, अम्बेल्लिप्रेनिन और अन्य घटक होते हैं।

सी बकथोर्न, छर्मा

वानस्पतिक नाम: हिपोफे रेम्नोइड्स
व्यापारिक नाम: सी बकथोर्न
कुल: एलेगनेसी
प्रयोज्य अंग: फल, पत्तियाँ और जड़ें

रोचक तथ्य: सी बकथोर्न का उपयोग पारंपरिक चिकित्सा में किया जाता है। यह पौधा विशेष रूप से इसके उच्च पोषण मूल्य के लिए प्रसिद्ध है, और इसके फलों में विटामिन सी, एंटीऑक्सिडेंट और अन्य महत्वपूर्ण पोषक तत्व होते हैं।

चिकित्सीय उपयोग: सी बकथोर्न के फलों का उपयोग प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करने, त्वचा रोगों, पाचन संबंधी समस्याओं, हृदय स्वास्थ्य, और सूजन कम करने के लिए किया जाता है। इसका तेल भी त्वचा और बालों के लिए फायदेमंद होता है।
स्वभाव और आवास: यह प्रजाति उष्णकटिबंधीय और समशीतोष्ण क्षेत्रों में पाई जाती है। सी बकथोर्न मुख्यतः भारत के हिमालयी क्षेत्रों, तिब्बत और अन्य पर्वतीय क्षेत्रों में उगता है। यह साधारणत: 1,000 से 3,000 मीटर की ऊँचाई पर पाया जाता है।

वानस्पतिक विवरण: यह एक कांटेदार, झाड़ीदार पौधा है जो 1 से 3 मीटर ऊँचा होता है। इसकी शाखाएँ पतली और लचीली होती हैं, और पत्तियाँ पत्तेदार, लंबी, और हरे-चांदी रंग के मिश्रण सी प्रतीत होती हैं। इसके छोटे, पीले-नारंगी फल होते हैं, जो गुच्छों में लगते हैं। फल का आकार लगभग 6-10 मिलीमीटर होता है।

कृषि तकनीक: सी बकथोर्न का प्रचार बीजों और कटिंग्स द्वारा किया जाता है। बीजों को वसंत ऋतु में बोया जाना चाहिए। इसका अंकुरण दर लगभग 50-70% होता है। इसके पौधे 2-3 साल बाद फल देना शुरू कर देते हैं।
भूमि की तैयारी और खाद: भूमि को अच्छी तरह से जोतकर समतल किया जाना चाहिए। अच्छी गुणवत्ता वाली गोबर की खाद (एफवाईएम) @ 10 टन प्रति हेक्टेयर मिलानी चाहिए।

रोपाई और इष्टतम अंतराल: पौधों को 2-3 मीटर के अंतराल पर लगाना चाहिए ताकि उन्हें फैलने के लिए पर्याप्त जगह मिल सके।

निराई: निराई-गुड़ाई का काम नियमित रूप से 4-6 सप्ताह के अंतराल पर करना चाहिए।

रोग एवं कीट नियंत्रण: सामान्यतः सी बकथोर्न में कोई प्रमुख रोग नहीं होते हैं, लेकिन फंगस और कीटों से सुरक्षा के लिए आवश्यक उपाय किए जाने चाहिए।

कटाई: सी बकथोर्न का पौधा 2-3 साल बाद फल देने लगता है। फल को पकने पर हाथ से या हल्की चाकू से काटा जाता है। फलों को सूखा या ताजा उपयोग के लिए संग्रहित किया जाता है।

उपज: यह फसल 5 साल के बाद प्रति हेक्टेयर 1-2 टन फल देती है।

रासायनिक घटक: सी बकथोर्न के फलों में विटामिन सी, विटामिन ई, एंटीऑक्सिडेंट, और फाइबर होते हैं। इसके अलावा, इसमें ओमेगा-3, ओमेगा-6 और ओमेगा-9 फैटी एसिड भी पाए जाते हैं, जो स्वास्थ्य के लिए लाभदायक हैं।

जटामांसी

वानस्पतिक नाम: नार्डोस्टैचिस जटामांसी
व्यापारिक नाम: जटामांसी
कुल: वेलेरिएनेसी
प्रयोज्य अंग: जड़

रोचक तथ्य: जटामांसी का उपयोग पारंपरिक चिकित्सा में किया जाता है। यह विशेष रूप से अपनी सुगंधित जड़ों के लिए प्रसिद्ध है। यह पौधा हिमालयी क्षेत्रों में प्राकृतिक रूप से उगता है और इसे औषधीय गुणों के लिए उच्च मान्यता प्राप्त है।

चिकित्सीय उपयोग: जटामांसी का उपयोग तनाव, चिंता, और नींद संबंधी समस्याओं के उपचार के लिए किया जाता है। इसके अलावा, यह पेट की समस्याओं, और त्वचा रोगों के लिए भी लाभकारी है। इसकी जड़ें तंत्रिका तंत्र को शांत करने और रक्त संचार को सुधारने में मदद करती हैं। इससे तैयार तेल बालों की वृद्धि को बढ़ावा देने और उन्हें काला करने के लिए प्रयोग किया जाता है।

स्वभाव और आवास: यह प्रजाति मुख्यतः हिमालय क्षेत्र में 3,000 से 5,000 मीटर की ऊँचाई पर समशीतोष्ण और अल्पाइन क्षेत्रों में प्राकृतिक रूप से उगती है। भारत में, यह विशेष रूप से हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, सिक्किम, और जम्मू-कश्मीर में मिलती है।

वानस्पतिक विवरण: यह एक बहुवर्षीय, हर्बेशियस पौधा है जो 30 से 100 सेंटीमीटर ऊँचा होता है। इसकी जड़ें मोटी और रेशेदार होती हैं, जिनमें विशेष सुगंध होती है। इसके पत्ते लंबे, चौड़े और समग्र होते हैं। फूल छोटे, लाल-गुलाबी रंग के होते हैं, जो गुच्छों में लगते हैं और गंध में बहुत सुगंधित होते हैं।

कृषि तकनीक: इस पौधे का प्रचार बीजों और जड़ विभाजन द्वारा किया जाता है। अप्रैल-मई के दौरान ओपन बेड में बीज बोए जाते हैं और नवंबर-दिसंबर

के दौरान पॉलीहाउस में। मार्च-जून के दौरान बीजों का प्रत्यारोपण किया जाता है। जड़ों को विभाजित करके पौधे का वानस्पतिक प्रसार किया जाता है।

भूमि की तैयारी और खाद: भूमि को अच्छी तरह से जोतकर समतल किया जाना चाहिए ताकि यह खरपतवार मुक्त हो जाए। फिर, 10 टन प्रति हेक्टेयर की दर से अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर की खाद (एफवाईएम) को मिट्टी में मिलाना चाहिए।

रोपाई और इष्टतम अंतराल: पौधों को 30 x 30 सेंटीमीटर के अंतराल पर रोपा जाना चाहिए।

सिंचाई और निराई: पौधों की मृत्यु दर को कम करने के लिए अत्यधिक सिंचाई की आवश्यकता होती है। मई-जून और सितंबर-अक्टूबर के दौरान प्रत्येक दो दिनों के अंतराल पर पानी देना चाहिए। पहले वर्ष में साप्ताहिक अंतराल पर निराई की जाती है और दूसरे व तीसरे वर्ष में महीने में दो बार।

रोग एवं कीट नियंत्रण: जटामांसी में कोई प्रमुख रोग नहीं पाया जाता है, लेकिन फंगस और कीटों से सुरक्षा के लिए आवश्यक उपाय किए जाने चाहिए।

कटाई और फ़सल प्रबंधन: यह एक बारहमासी फसल है। पौधे 2-3 साल के बाद परिपक्व होते हैं। जड़ों को सूखने के बाद काटा जाता है और उन्हें 15-20 सेंटीमीटर लंबे टुकड़ों में काटकर धोकर छाया में सुखाया जाता है। सूखे पदार्थ को साफ कंटेनर या बोरियों में संग्रहित किया जाना चाहिए।

उपज: यह फसल 5 साल के बाद प्रति हेक्टेयर 2.0 - 3.0 टन सूखी जड़ की उपज देती है।

रासायनिक घटक: जटामांसी की जड़ों में नार्डोस्टैचिस रेजिन, फाइटोस्टेरोल्स, और अन्य महत्वपूर्ण घटक पाए जाते हैं।

कुटकी

वानस्पतिक नाम: पिक्रोराइज़ा कुर्रोआ
व्यापारिक नाम: कुटकी
कुल: स्क्रॉफुलेरिएसी
प्रयोज्य अंग: जड़ और प्रकंद

रोचक तथ्य: कुटकी का उल्लेख आयुर्वेद के प्राचीन और शास्त्रीय ग्रंथ चरक संहिता में चिकित्सीय उपयोग के लिए किया गया है। हालाँकि आयुर्वेद में इसके बढ़ते उपयोग के कारण इसके अत्यधिक संग्रहण ने इसे संकट में डाल दिया है जिसके कारण इसे 'लुप्तप्राय प्रजातियों' की श्रेणी में सूचीबद्ध किया गया है।

चिकित्सीय उपयोग : पाचन संबंधित समस्याओं के इलाज के लिए भारतीय आयुर्वेदिक चिकित्सा में इस प्रजाति के प्रकंद का उपयोग का एक लंबा इतिहास रहा है। इसके अलावा अस्थमा, यकृत, घाव भरने, विटिलिगो में भी इसका इस्तेमाल किया जाता है। कुटकी में हेपेटोप्रोटेक्टिव गुण होते हैं जिसके कारण इसे यकृत और प्लीहा की बीमारियों में इस्तेमाल किया जाता है। यह हेपेटाइटिस सी वायरस से होने वाले नुकसान से लीवर की रक्षा करता है। यह ज्वरनाशक, सूजनरोधी, दर्द निवारक, एंटी- एलर्जिक, एंटी-माइक्रोबियल गुणों से भरपूर पौधा है।

स्वभाव और आवास: यह प्रजाति कश्मीर से सिक्किम तक अल्पाइन हिमालय क्षेत्र में 3000 से 4500 मीटर की ऊंचाई के बीच पाई जाती है। यह झरनों के पास नम चट्टानों पर, टिम्बर लाइन से लेकर अल्पाइन तक के छायादार क्षेत्रों में पाई जाती है। संकीर्ण पत्ती वाली किस्म आम तौर पर झरनों के पास अल्पाइन क्षेत्र में, चट्टानी घाटियों, खड़ी ढलानों और चट्टानों पर पाई जाती है जबकि चौड़ी पत्ती वाली किस्म अपेक्षाकृत कम ऊंचाई पर नम परिस्थितियों और उच्च ह्यूमस सामग्री वाली झाड़ियों के नीचे पाई जाती है। रेतीली चिकनी मिट्टी इसकी वृद्धि के लिए सबसे अच्छी है। इसकी खेती के लिए जैविक कार्बन और उच्च नमी वाली जगह की आवश्यकता होती है।

वानस्पतिक विवरण: कुटकी एक छोटा, रोयेंदार, बहुवर्षीय शाक है, जिसकी जड़ों में लम्बे रेंगने वाले स्टोलन होते हैं। इसकी पत्तियां चपटी और दाँतेदार होती हैं। इसके फूल सफेद या हलके नीले रंग के, घने गुच्छों में होते हैं। सूखा प्रकंद बेलनाकार, गहरे भूरे रंग का तथा लम्बाई में झुर्रीदार होता है।

कृषि तकनीक:

नर्सरी तकनीक: बीजों को अंकुरण के लिए मदर बेड या पॉलीबैग में भी लगाया जा सकता है। बीज किसी भी तरह की निष्क्रियता नहीं दिखाते हैं और बिना किसी पूर्व उपचार के अंकुरित हो जाते हैं। जब मिट्टी की सतह काई से ढकी होती है, तो अंकुरण प्रतिशत अधिकतम होता है।

इसके अतिरिक्त अक्टूबर-नवंबर में राइजोम/ स्टोलन /ऑफसेट का उपयोग करके भी नर्सरी बेड में पौधे लगाए जा सकते हैं । पौध स्टॉक को पॉलीबैग, स्टायरोफोम ट्रे या मदर बेड में उगाया जाता है। हालांकि, पानी की कमी के दौरान नमी को संरक्षित करने के लिए नर्सरी में संकन बेड तैयार किए जाने चाहिए। प्रत्येक ऑफसेट या राइजोम के टुकड़े में दो से तीन नोड्स होने चाहिए।

प्रसार दर और इष्टतम अंतर: 1 हेक्टेयर भूमि में पौधे उगाने के लिए 1-1.5 किलोग्राम बीज की आवश्यकता होती है। 30 × 20 सेंटीमीटर की दूरी पर लगाए गए प्रकंद उपज के मामले में सबसे अच्छे परिणाम देते हैं।

खेत में रोपण: भूमि को बार-बार हल चलाकर भुरभुरा और छिद्रपूर्ण बनाना चाहिए ताकि नीचे की ओर प्रकंदों का फैलाव अच्छी तरह से हो सके। सौरीकरण के लिए खेत को एक सप्ताह के लिए खुला छोड़ दिया जाता है। इसके साथ ही वन पत्ती या अच्छी तरह से विघटित फार्मयार्ड खाद (FYM) को रोपाई से कम से कम 15 दिन पहले 6 टन/हेक्टेयर की दर से मिट्टी में मिलाया जाता है।

अंतरफसल प्रणाली: सौंफ, आलू की फसल के साथ कुटकी की अंतरफसल काफी सफल रही है, क्योंकि ये पौधे बेहतर विकास के लिए सूक्ष्म जलवायु प्रदान करते हैं, यानी वे लंबे समय तक नमी बनाए रखते हैं। ये कुटकी के बेहतर विकास के लिए छाया प्रदान करते हैं । हालांकि, आलू की कटाई के समय कुटकी की फ़सल को विशेष देखभाल की आवश्यकता होती है, क्योंकि इस प्रक्रिया के दौरान पौधे उखड़ सकते हैं। इसीलिए आलू की खेती में क्यारियों को ऊंचा करके कुटकी के पौधों को उठी हुई क्यारियों के बीच में लगाया जाता हैं। हालाँकि, आलू की कटाई के बाद मिट्टी को वापिस चढ़ाना आवश्यक है।

सिंचाई और निराई: पौधों के शुरुआती विकास के चरण में, कम ऊंचाई (1800 मीटर) वाले क्षेत्रों पर हर 24 घंटे के बाद पानी देने की आवश्यकता होती है। सर्दियों के महीनों के दौरान आम तौर पर दो दिनों के अंतराल पर पानी देना चाहिए।

इसके अतिरिक्त खेती के पहले वर्ष के दौरान साप्ताहिक अंतराल पर और दूसरे और तीसरे वर्ष के दौरान मासिक अंतराल पर निराई की जाती है।

यह मिट्टी की स्थिति और खरपतवारों की उपस्थिति पर भी निर्भर करता है।

कटाई/कटाई के बाद: प्रजनन चरण पूरा होने के बाद पौधे कटाई के लिए परिपक्व हो जाते हैं और उनमें सक्रिय तत्वों की अधिक मात्रा पाई जाती है। प्रजनन चरण पूरा होने का समय उस स्थान की ऊंचाई के अंतर के साथ अलग-अलग होता है। आम तौर पर अल्पाइन क्षेत्रों में पौधे सितंबर-अक्टूबर के महीने में अपना प्रजनन चरण पूरा करते हैं जबकि कम ऊंचाई पर पौधे सितंबर के महीने में अपना प्रजनन चरण पूरा करते हैं। जैव-सक्रिय तत्वों की अधिकतम मात्रा प्राप्त करने के लिए कम ऊंचाई पर सितंबर के महीनों में जबकि अधिक ऊंचाई पर अक्टूबर के महीनों में कटाई की जानी चाहिए।

उपज: इस प्रजाति की औसत उपज 450 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर है, जबकि वन में गिरे हुए पत्ते, टहनियाँ, और अन्य जैविक पदार्थों से उपचारित खेत से अधिकतम उपज 612 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती है।

रासायनिक घटक: कुटकीन, पिक्रोसाइड I, कुटकोसाइड आदि।

वनककड़ी

वानस्पतिक नाम: पोडोफ़ाइलम हेक्सेन्ड्रम
व्यापारिक नाम: वनककड़ी
कुल: बर्बेरिडेसी
प्रयोज्य अंग: जड़, कंद

रोचक तथ्य: "पोडोफ़ाइलम" जाति का उल्लेख फार्माकोपिया में 1820 से किया गया है। इसे रेचक और पित्तशामक के रूप में प्रयोग किया जाता है। इस पौधे में कई विकारों के उपचार के लिए आयुर्वेद, यूनानी और सिद्ध सहित विभिन्न पारंपरिक चिकित्सा प्रणालियों में अपार संभावनाएं हैं। पोडोफिलोटॉक्सिन के दो व्युत्पन्न, जिन्हें एलोपोसाइड और टेनिपोसाइड कहा जाता है, वह कैंसर के उपचार के लिए उपयोग किए जाते हैं।

चिकित्सीय उपयोग: प्रकंद का उपयोग टाइफाइड बुखार के लिए किया जाता है। इसके साथ ही पीलिया, पेचिश, क्रोनिक हेपेटाइटिस, स्क्रोफुला, गठिया, त्वचा रोग, ट्यूमर, गोनोरिया, सिफलिस, गुर्दे और मूत्राशय की समस्याओं में भी इसका उपयोग किया जाता है।

स्वभाव और आवास: यह प्रजाति भारत में हिमालय क्षेत्र में 2,700 से 4,200 मीटर की ऊँचाई पर पाई जाती है। भारत में यह आमतौर पर उत्तराखंड, असम, अरुणाचल प्रदेश, मणिपुर और जम्मू-कश्मीर में पाया जाता है। हिमाचल प्रदेश में, यह मंडी, रोहड़ू, कांगड़ा, चंबा और लाहौल- स्पिति में पाया जाता है। यह प्रजाति समशीतोष्ण और उप-अल्पाइन क्षेत्रों में सूखी हुई ह्यूमस युक्त मिट्टी और जंगलों में पनपती है।

वानस्पतिक विवरण: यह एक रसीला, सीधा और रोएरहित पौधा है। यह पौधा 30 सेंटीमीटर ऊँचा होता है, जिसमें रेंगने वाले लंबे, गांठदार प्रकंद होते हैं। इसमें एक से चार प्रजनन तने और पाँच से आठ शाकीय तने होते हैं, जो अप्रैल से मई में निकलते हैं। शाकीय तने पर एक पत्ता होता है, जबकि प्रजनन तनों पर आमतौर पर दो पत्ते होते हैं, और कभी-

कभी तीन या चार हथेली के आकार के पत्ते भी होते हैं। इसमें एक सफेद या गुलाबी फूल तने के बीच में खिलता है। यह फूल कप के आकार का होता है जो 2 से 3 सेंटीमीटर लंबा होता है। इसमें तीन पंखुड़ीनुमा कलियाँ और छह पत्तेदार पंखुड़ियाँ होती हैं। फल अंडाकार, गूदेदार और कई बीजों वाला होता है, जो डंठल पर लगता है।

कृषि तकनीक: इस पौधे को बीज और रूटस्टॉक (जड़ों) द्वारा प्रचारित किया जाता है। इसके बीज को सर्दियों की शुरुआत से पहले यानी वसंत ऋतु में बोना चाहिए। बीजों का अंकुरण 41-45% प्रतिशत तक होता है। हालांकि अंकुरों की वृद्धि दर दो मौसमों के विकास के बाद भी बहुत धीमी होती है। वे 6.5-7.2 सेमी की ऊंचाई प्राप्त कर सकते हैं। इस विधि से इस पौधे की उत्तरजीविता दर 85.0-92.6% तक होती है। इस पौधे को एक हेक्टेयर भूमि में लगाने के लिए 7.0-8.0 किलोग्राम बीज की आवश्यकता होती है। बीज को किसी पूर्व उपचार की आवश्यकता नहीं होती है।

भूमि की तैयारी और खाद: भूमि को अच्छी तरह से जोतकर समतल कर देना चाहिए ताकि यह खरपतवार मुक्त हो जाए। फिर, 10 टन प्रति हेक्टेयर की दर से अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर की खाद (एफवाईएम) को मिट्टी में अच्छे से मिलाना चाहिए।

रोपाई और इष्टतम अंतराल: 10-12 सेंटीमीटर ऊंचाई वाले पौधों को 30 x 60 सेंटीमीटर के अंतराल पर रोपा जाता है। इस पौधे को अच्छी तरह स्थापित होने में लगभग 15 दिन लगते हैं।

सिंचाई और निराई: इसमें निराई-गुड़ाई का काम नियमित रूप से 4 सप्ताह के अंतराल पर किया जाना चाहिए। मार्च से मई के महीनों के दौरान नियमित रूप से निराई, गुड़ाई की आवश्यकता होती है। आमतौर पर फसल को जून-अगस्त में गर्म मौसम के दौरान ठंडा, छायादार वातावरण और हल्की सिंचाई की आवश्यकता होती है।

रोग एवं कीट नियंत्रण: इस फसल में कोई रोग या कीट नहीं पाया जाता है।

कटाई और फ़सल प्रबंधन: यह एक बारहमासी फसल है। इसके पौधे पहले वर्ष के दौरान वनस्पति अवस्था में रहते हैं और दूसरे और तीसरे वर्ष में फूल आना शुरू हो जाते हैं। इन पौधे की जड़ों और प्रकंदों को को सूखने के बाद काटा जाता है। फिर जड़ों और प्रकंदों को 15 से 20 सेसेंटीमीटर लंबे टुकड़ों में काटकर और धोकर, छाया में सुखाया जाता है। पौधे के सूखे पदार्थ को साफ कंटेनर या बोरियों में संग्रहित किया जाना चाहिए।

उपज: यह फसल 5 वर्ष के बाद एक हेक्टेयर से 3.0 - 4.0 टन सूखे मूलवृंत और 10 किलोग्राम बीज की उपज देती है।

रासायनिक घटक: प्रकंद और जड़ में रालयुक्त (रेसिनयुक्त) मिश्रण होता है जिसे पोडोफाइलम रेसिन या पोडोफाइलिन कहा जाता है । प्राथमिक घटक लिग्निन ग्लाइकोसाइड्स, पोडोफिलोटॉक्सिन, पोडोफाइलिक एसिड और पिक्रोपोडोफाइलिन आदि होते हैं।

रखाल, बर्मी

वानस्पतिक नाम: टैक्सस बकाटा
व्यापारिक नाम: रखाल
कुल: टैक्सेसी
प्रयोज्य अंग: पत्तियां और छाल

रोचक तथ्य: इसे पश्चिमी हिमालय में थुनेर के नाम से जाना जाता है, तथा इसका औषधीय महत्व बहुत अधिक है। यह पौधा पारंपरिक चिकित्सा में महत्वपूर्ण स्थान रखता है और इसके उत्पादों का उपयोग स्थानीय लोगों द्वारा सामान्य संक्रमणों के इलाज के लिए किया जाता है। इसकी पत्तियों और छाल में टैक्सोल का मुख्य स्रोत पाया गया है, जो एक शक्तिशाली कैंसर रोधी दवा है जिसमें कैंसर कोशिकाओं के विकास को रोकने का एक अनूठा गुण है और इसका उपयोग स्तन और डिम्बग्रंथि के कैंसर के उपचार में किया जाता है।

चिकित्सीय उपयोग: रखाल का इस्तेमाल पारंपरिक रूप से तेज बुखार और दर्दनाक सूजन और जलन के लिए किया जाता है। सर्दी, खांसी, श्वसन संक्रमण, अपच और मिर्गी के इलाज के लिए इसका सेवन काढ़े, हर्बल चाय और जूस के रूप में किया जाता है। इसकी छाल और पत्तियों का उपयोग गठिया के इलाज के लिए भाप स्नान में किया जाता है, और इसकी छाल से बने पेस्ट का उपयोग फ्रैक्चर और सिरदर्द के इलाज के लिए किया जाता है।

स्वभाव और आवास: यह प्रजाति हिमालय के समशीतोष्ण और उप-अल्पाइन क्षेत्र में 1800-3300 मीटर की ऊँचाई पर हिमाचल प्रदेश, जम्मू और कश्मीर, उत्तराखंड, मेघालय, नागालैंड और मणिपुर में पाया जाता है।

वानस्पतिक विवरण: यह भारतीय हिमालयी क्षेत्र में पाए जाने वाला एक मध्यम आकार का, उच्च मूल्य वाला औषधीय पौधा है। यह एक विशाल तने के साथ 9-20 मीटर की ऊँचाई प्राप्त करता है। इसकी पत्तियाँ चपटी, गहरे हरे रंग की, 1-4 सेंटीमीटर लंबी और 2-3 मिलीमीटर चौड़ी, आधार पर मुड़ी हुई और तने पर सर्पिल रूप से व्यवस्थित होती हैं। तना प्रचुर मात्रा में शाखाओं वाला होता है और एक पतली भूरे रंग की छाल से ढका रहता है। पौधे मुख्य रूप से गोलाकार नर फूल और मादा फूल पत्ती की धुरी में छोटे डंठल वाले शंक्वाकार कलियों के रूप में दिखाई देते हैं। बीज भूरे और अखरोट जैसे होते हैं, जो पहले वर्ष में पकते हैं।

कृषि तकनीक: मिट्टी को अधिक पारगम्य बनाने के लिए भूमि को दो या तीन बार जोता जाता है। खरपतवार और पत्थरों को मिट्टी से अलग कर दिया जाता है और भूमि को एक सप्ताह तक धूप में ऐसे ही रहने दिया जाता है।

प्रसार विधियाँ: इस पौधे को बीज और कटिंग द्वारा उगाया जा सकता है।

बीज: बीज मध्यम आयु के, स्वस्थ और रोग मुक्त पेड़ से शरद ऋतु के महीने में एकत्रित किए जाते हैं। बीजों को बोते समय 1/2 इंच मिट्टी से ढकना चाहिए और उचित नमी और तापमान सुनिश्चित करने के लिए मल्चिंग और छायांकन का उचित प्रबंध करना चाहिए। बीज को पकने के तुरंत बाद बोया जाता है। संग्रहीत बीज को अंकुरित होने में 2 साल या उससे अधिक समय लग सकता है। बीजों को 65º F पर 5-7 महीने गर्म स्तरीकरण दिया जाना चाहिए, इसके बाद 34º-40º F पर 2-4 महीने ठंडा स्तरीकरण दिया जाना चाहिए।

तने की कटिंग: रखाल की कटिंग 15-20 सेंटीमीटर लंबी और 4-5 सेंटीमीटर व्यास की होनी चाहिए, जिसमें 3-4 नोड्स शामिल हों। युवा तनों को परिपक्व वृक्षों की छाया से पत्तियों सहित लिया जाता है। पत्तियों की अधिकता से पानी की कमी हो सकती है, जबकि बिना पत्तियों वाली कटिंग की जड़ें नहीं जमतीं इसलिए पत्तियों का ध्यान रखना चाहिए। कटिंग को 45° कोण पर तिरछी स्थिति में क्यारियों में लगाया जाता है। साथ ही धूप से बचाकर 70% से अधिक आर्द्रता बनाए रखनी चाहिए। कटिंग जुलाई-अगस्त में लगाई जाती हैं

जिनसे सितंबर-अक्टूबर के महीने में जड़ें तैयार हो जाती हैं। इसके बाद इन्हें जून में प्रत्यारोपित किया जा सकता है।

खाद: रखाल के पौधों के बेहतर विकास के लिए जैविक खाद का उपयोग आवश्यक है। पौधारोपण से पहले खेत की तैयारी के दौरान प्रति हेक्टेयर लगभग 10-15 टन फार्म यार्ड मैन्योर (FYM) का उपयोग किया जाता है।

सिंचाई: रखाल को अत्यधिक पानी की आवश्यकता होती है। यह सुनिश्चित करना जरूरी है कि मिट्टी कभी सूखने न पाए और हमेशा नम रहे। हालांकि, जलभराव से बचना चाहिए, क्योंकि यह प्रजाति जलभराव को सहन नहीं कर सकती।

कटाई: केवल 20 सेंटीमीटर से अधिक व्यास वाले परिपक्व पेड़ों से ही कटाई की जानी चाहिए। पत्तियों से आवश्यक तेल निकालने के लिए, उन्हें सुबह जल्दी एकत्र किया जाना चाहिए क्यूंकि उस समय तेल की सक्रियता सबसे अधिक होती है। पेड़ों की केवल 10-15 सेंटीमीटर लंबी टहनियों को काटें ताकि इन्हें नुक्सान न हो।

प्रबंधन और प्रसंस्करण: काटी गई सामग्री को साफ पानी से धोया जाता है। औषधीय पौधों के बीज और नाजुक हिस्सों को सावधानी से साफ़ करना चाहिए। सुखाने से पहले जड़ी-बूटियों से अतिरिक्त पानी निकाल देना चाहिए। पत्तियों और शाखाओं को 3-4 दिनों तक छाया में सुखाया जाता है।

पत्तियों को अच्छी तरह सुखाकर एयरटाइट बैग में संग्रहित किया जाता है। दीर्घकालिक भंडारण के लिए, पत्तियों को टूटने से बचाकर सुखाना आवश्यक है। पत्तियों को बंडलों में बांधकर बोरियों में पैक किया जाता है, जिससे फंगस के हमले से बचाया जा सके।

रासायनिक घटक: रखाल की छाल में प्रमुख घटक टैक्सोल होता है। अन्य महत्वपूर्ण घटकों में आइसोलिओविल, कोनिडेन्ड्रिन, टेक्साइरेसिनोल आदि, हृदय-काष्ठ में पाए जाते हैं, जिनमें कैंसर और अल्सर विरोधी गुण होते हैं।

नागछतरी

वानस्पतिक नाम: ट्रिलियम गोवैनीएनम
व्यापारिक नाम: नागछतरी
कुल: मेलेंन्थीएसी
प्रयोज्य अंग: जड़

रोचक तथ्य: नागछतरी एक महत्वपूर्ण औषधीय पौधा है, जिसका उपयोग पारंपरिक चिकित्सा प्रणालियों में किया जाता है।

चिकित्सीय उपयोग: यह औषधीय प्रजाति गर्भाशय की समस्या, मासिक धर्म के प्रवाह का नियंत्रण, गठिया, पाचन संबंधी विकार, त्वचा रोग, अन्य पेट से संबंधित समस्याओं में इस्तेमाल की जाती है। इसकी औषधीय विशेषताओं के कारण, इसकी मांग अंतरराष्ट्रीय बाजारों में बढ़ती जा रही है।

स्वभाव और आवास: यह प्रजाति हिमालय क्षेत्र में 2,700 से 4,000 मीटर की ऊँचाई पर पाई जाती है। भारत में यह सामान्यतः हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड और सिक्किम में पाई जाती है। यह समशीतोष्ण और उप-अल्पाइन क्षेत्रों में ह्यूमस समृद्ध मिट्टी और छायादार जंगलों में उगती है।

वानस्पतिक विवरण: यह एक बारहमासी, जड़ी-बूटी है, जिसकी ऊँचाई 15-30 सेंटीमीटर तक होती है। इसमें मोटे, फैलने वाले मूल होते हैं, और तना सीधा और बिना शाखाओं वाला होता है। इसकी पत्तियाँ चौड़ी, अंडाकार, और 0.5-1.5 सेंटीमीटर लंबी, तीन के समूह में व्यवस्थित होती हैं। इसके फूल भूरे-बैंगनी रंग के होते हैं, एकल फूल डंठल पर खिलता है। फल गोलाकार और लाल रंग का होता है, जिसमें अनेक अंडाकार बीज होते हैं।

कृषि तकनीक: यह पौधा मुख्यतः विभाजन और बढ़ते कलियों के साथ मूल रोपण द्वारा प्रचारित किया जाता है। इस पौधे का बीजों से प्रचारित करना भी संभव है, लेकिन इसके लिए विस्तृत जानकारी उपलब्ध नहीं है। भूमि को अच्छी तरह से जोतकर समतल करना चाहिए और ह्यूमस समृद्ध मिट्टी में 10-15 टन प्रति हेक्टेयर की दर से गोबर की खाद मिलानी चाहिए।

रोपाई और इष्टतम अंतराल: पौधों को 10-15 सेंटीमीटर की दूरी पर रोपित किया जाता है। रोपण की घनत्व बढ़ाने के लिए इन्हें 15-20 सेंटीमीटर की पंक्तियों में रखा जाता है।

सिंचाई और निराई: पौधों को गर्मियों में हल्की सिंचाई की आवश्यकता होती है। निराई-गुड़ाई का काम नियमित रूप से 4-6 सप्ताह के अंतराल पर किया जाना चाहिए।

रोग एवं कीट नियंत्रण: इस पौधे में रोग या कीटों का प्रभाव नहीं पाया गया है।

फसल की परिपक्वता और कटाई: यह पौधा पहले वर्ष के दौरान वनस्पति अवस्था में रहता है। इसकी जड़ों और प्रकंदों को सितंबर में काटा जाता है। काटने के बाद, उन्हें धोकर छाया में सुखाया जाता है।

उपज: 5 वर्ष के बाद, यह फसल 1 हेक्टेयर से 2.0 - 3.0 टन सूखे मूलवृंत और 5-10 किलोग्राम बीज की उपज देती है।

रासायनिक घटक: जड़ों में ट्रिलारिन, डियोजेनिन, और अन्य फाइटोकेमिकल्स पाए जाते हैं, जो इसकी औषधीय विशेषताओं के लिए जिम्मेदार होते हैं।

मुश्कबाला, तगर

वानस्पतिक नाम: वेलेरियाना जटामांसी
व्यापारिक नाम: मुश्कबाला, सुगंधबाला
कुल: वेलेरिएनेसी
प्रयोज्य अंग: सूखी जड़ें और प्रकंद

रोचक तथ्य: विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में "वेलेरियाना" की विभिन्न प्रजातियाँ अपनी विविध चिकित्सीय भूमिकाओं के लिए जानी जाती हैं। सभी मौजूदा वेलेरियाना प्रजातियों में से, वेलेरियाना जटामांसी प्राचीन काल से आयुर्वेदिक (चरक संहिता और सुश्रुत) और यूनानी चिकित्सा पद्धति में एक महत्वपूर्ण जड़ी बूटी रही है। आधुनिक दवाओं की तुलना में यह एक बेहतर शामक औषधि है, और कभी-कभी यह अन्य जेनेरिक दवाओं के साथ चिकित्सीय प्रभावों को बढ़ाती है।

चिकित्सीय उपयोग : इस प्रजाति की जड़ के अर्क में वेलेरियन पाया जाता है जिसका उपयोग हल्के ट्रैंक्विलाइज़र के रूप में और अनिद्रा के उपचार के लिए किया जाता है। वेलेरियन को रक्तचाप कम करने, शामक, ऐंठनरोधी और कृत्रिम निद्रावस्था के लिए उपयोग किया जाता है।

स्वभाव और आवास: यह प्रजाति कश्मीर से लेकर भूटान और खासी पहाड़ियों तक समशीतोष्ण हिमालय में पाई जाती है। यह उत्तर-पश्चिमी हिमालय में 1800-3000 मीटर की ऊँचाई पर और असम और उत्तर-पूर्वी भारत में 1200-1800 मीटर के बीच प्राकृतिक रूप से उगता है। यह पर्याप्त नमी और अच्छी जल निकासी वाली ह्यूमस युक्त, भारी दोमट मिट्टी में सबसे अच्छा पनपता है। जड़ों को आसान और कुशल तरीके से काटने के लिए, कम मिट्टी वाली अपेक्षाकृत ढीली मिट्टी वांछनीय है। इसकी क्यारियों को पानी के ठहराव से बचाना चाहिए, क्योंकि इससे पौधों की जड़ें सड़ने लगती हैं।

वानस्पतिक विवरण: तगर एक सुगंधित जड़ी बूटी है जो 50 सेंटीमीटर तक ऊंची होती है। इस पौधे की जड़ मोटी, 6-10 सेंटीमीटर लंबी और रेशेदार होती हैं जो असमान गोलाकार लकीरों से बंधी होती हैं। पौधे में कई तने होते हैं, जो 15-45 सेंटीमीटर लंबे होते हैं। पत्तियाँ दो प्रकार की होती हैं, रेडिकल और कौलीन। तगर के फूल सफेद या गुलाबी रंग के होते हैं जो एक लिंगी होते हैं। इसमें नर और मादा फूल अलग-अलग पौधों पर दिखाई देते हैं।

कृषि तकनीक: तगर के पौधों को बरसात के मौसम में बीजों या रूटस्टॉक (जड़) का उपयोग करके प्रचारित किया जाता है। आमतौर पर फसल को सकर्स (suckers) के माध्यम से उगाना उचित होता है क्योंकि बीजों के माध्यम से उगाई गई फसल को पकने में अधिक समय लगता है। बीजों को अप्रैल-मई में एकत्र करके तुरंत नर्सरी में बोया जा सकता है। इन पौधों को पेड़ों की प्राकृतिक छाया या नाइलॉन की जाली लगाकर छाया करनी चाहिए।

नर्सरी तकनीक: रूट सकर्स (suckers) के माध्यम से फसल को उगाने के लिए, जून या मानसून की शुरुआत में एक अलग मदर नर्सरी बनानी चाहिए। मदर नर्सरी से ताजा जड़ वाले सकर (sucker) को खेत में 4-5 सेंटीमीटर की गहराई पर लगाया जाता है।

यदि फसल को बीज के माध्यम से उगाना है, तो अप्रैल-मई में अलग से नर्सरी तैयार की जाती है। इसके बीज 15-20 दिनों में अंकुरित होते हैं और आगे की वृद्धि के लिए पॉलीबैग में लगा दिए जाते हैं। लगभग तीन महीने के समय में पौधे रोपने के लिए तैयार हो जाते हैं।

प्रसार दर और पूर्व उपचार : 1 हेक्टेयर भूमि के लिए पौध स्टॉक तैयार करने के लिए लगभग 2.5-3 किलोग्राम बीज की आवश्यकता होती है। बीजों को किसी विशेष उपचार की आवश्यकता नहीं होती है।

भूमि की तैयारी और खाद: जड़ों की अधिकतम उपज के लिए मिट्टी को भुरभुरा बनाना आवश्यक है। यदि फसल को प्रकंदों/ रूट सकर्स के माध्यम से उगाना है, तो पहली जुताई जून के महीने में हल से की जाती है। इसके बाद खेत को 15-20 दिनों के लिए खाली छोड़ देना चाहिए ताकि मिट्टी में दबे फसल के अवशेष सड़ जाएँ और मिट्टी को उचित धूप भी मिले। दूसरी जुताई जून के अंत में और तीसरी जुताई मानसून की पहली बारिश के बाद करनी चाहिए। इस फसल को उपजाऊ और ह्यूमस युक्त मिट्टी की आवश्यकता होती है। इसके लिए

35-40 टन/हेक्टेयर की मात्रा में गोबर की खाद को अलग-अलग मात्रा में डालना सबसे अच्छा माना गया है।

रोपाई और इष्टतम अंतराल: जड़ वाले पौधों को जून-जुलाई में खेत में लगाया जाता है, जबकि अगस्त में ऊंचे स्थानों पर और अक्टूबर में कम ऊंचाई पर पौधों को रोपा जाता है। पंक्तियों में 40-50 सेंटीमीटर की दूरी और पौधों के बीच 20-30 सेंटीमीटर की दूरी रखनी चाहिए। लगभग 1 हेक्टेयर रोपण के लिए 75,000-85,000 पौधों की आवश्यकता होती है।

अंतरफसल प्रणाली: तगर को फलों के बागों में अंतर-फसल के रूप में उगाया जा सकता है । आड़ू के बाग में अंतर-फसल पर किए गए प्रायोगिक परीक्षणों से पता चलता है कि फसल दूसरे वर्ष में लगभग 12-15 क्विंटल/हेक्टेयर ताजा जड़ पैदा कर सकती है, जो दर्शाता है कि वेलेरियन फलों के बागानों में एक अच्छी पूरक फसल के रूप में काम कर सकता है।

सिंचाई और निराई: पौधों के स्थापित होने तक लगभग रोजाना सिंचाई की आवश्यकता होती है। इसके बाद, आवश्यकतानुसार, ढलान और मिट्टी की जल धारण क्षमता के आधार पर, सिंचाई अंतराल भिन्न-भिन्न हो सकता है। 25-30 दिनों के अंतराल पर मैन्युअल निराई करनी चाहिए।

रोग और कीट नियंत्रण: यह फसल कीटों और बीमारियों से अपेक्षाकृत मुक्त है। लेकिन कभी-कभी, प्रकंद सड़न देखी गई है जिसके लिए जैविक कीटनाशकों का इस्तेमाल किया जा सकता है।

कटाई और फ़सल प्रबंधन: तगर की कटाई पहले और दूसरे दोनों वर्षों में की जा सकती है लेकिन पहले वर्ष में कम उपज प्राप्त होती है। इसलिए, दूसरे वर्ष में फसल की कटाई करना उचित है। फसल अगस्त में शारीरिक रूप से परिपक्व हो जाती है, लेकिन पूरी तरह से परिपक्व होने के लिए कुछ और दिनों की आवश्यकता होती है। इसकी जड़ों की खुदाई और कटाई नवम्बर-दिसम्बर में की जाती है। फसल को काटने के बाद जितना जल्दी हो सके सुखा देना चाहिए। इसके लिए 35-40° सेल्सियस तापमान अतिउत्तम है। सूखे प्रकंदों को बोरियों/बांस की टोकरियों में संग्रहित किया जाता है।

उपज: पहले वर्ष में की गई कटाई से 35-40 क्विंटल/हेक्टेयर ताजा जड़ और 8-10 क्विंटल/हेक्टेयर विपणन योग्य सूखी जड़ें प्राप्त होती हैं। दूसरे वर्ष में कटाई करने पर फसल लगभग दोगुनी उपज देती है- 70-75 क्विंटल/हेक्टेयर ताजा जड़ और 20-25 क्विंटल/हेक्टेयर सूखी प्रकंद और जड़ें प्राप्त हो सकती हैं।

रासायनिक घटक: इसकी जड़ों से 0.5-2.12% सुगंधित तेल प्राप्त होता है। मालिओल आवश्यक तेल से अलग किया जाने वाला मुख्य मार्कर घटक है। इसके साथ इसमें वैलेरिनिक एसिड, वैलेरानोन, वेलेपोट्रिएट्स और गामा-एमिनोब्यूटिरिक एसिड आदि पाए जाते हैं।

आर॰सी॰एफ॰सी॰ एन॰आर॰ 1 टीम

डॉ॰ अरुण चन्दन
क्षेत्रीय निदेशक

निखिल ठाकुर
मार्केटिंग मैनेजर

अवीका सुब्बा
कंसल्टेंट मार्केटिंग

शीतल कुमार चन्देल
कंसल्टेंट टेक्निकल

डॉ॰ स्वेता ठाकुर
कंसल्टेंट टेक्निकल

डॉ॰ मिनाक्षी ठाकुर
कंसल्टेंट टेक्निकल

अभिषेक ठाकुर
ग्राफिक डिज़ाइनर

ऋषि कान्त
डाटा एंट्री ऑपरेटर

विशाल सिंह
स्टेनोग्राफर

अंजली
अकाउंटेंट

ममता ठाकुर
एम॰ टी॰ एस॰

RCFC NR-1
NATIONAL MEDICINAL PLANTS BOARD
Plants For Health & Prosperity
RIISM JOGINDER NAGAR

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें:

क्षेत्रीय निदेशक,
क्षेत्रीय एवं सुगमता केन्द्र, उत्तर भारत-1,
राष्ट्रीय औषध पादप बोर्ड, आयुष मंत्रालय
आयुर्वेद अनुसंधान संस्थान,
जोगिन्द्र नगर-175015, जिला मण्डी, हिमाचल प्रदेश
ई-मेल: rcfcnorth@gmail.com
वैब: rcfcnorth.in, jadibutibazar.in, echarak.in
सम्पर्क न॰ : 01908-222333

rcfcnorth.in

jadibutibazar.in